SHIKSHA SAMVAD
International Open Access Peer-Reviewed & Refereed
Journal of Multidisciplinary Research
ISSN: 2584-0983 (Online)
Volume-1, Issue-3, March- 2024
www.shikshasamvad.com

“भारतीय समाज में परम्परा एवं आधुनिकताः एक सैद्धान्तिक पक्ष”

देवेन्द्र कुमार
शोधार्थी
ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर, (उ.प्र.)

डॉ0 पायल गोयल
शोध पर्यवेक्षक
ग्लोकल विश्वविद्यालय,सहारनपुर, (उ.प्र.)

शोध सारांश:

परम्पराएँ हों या आधुनिकता, दोनों में आन्तरिक विशिष्टीकरण अवश्य होता है। जैसे पूर्व औद्योगिक भारतीय समाज में जहाँ सामन्तवादी व्यवस्था थी, उत्पादन विधि भिन्न थी, वहाँ भी परम्पराएँ एक जैसी हों, ऐसा नहीं था। उस युग में अभिजन संस्कृति, लोक–संस्कृति से भिन्न थी। दोनों की जीवन पद्धतियां अलग–अलग प्रकार की थीं। किसान–संस्कृति लोक–संस्कृति से भिन्न थी। दोनों वर्गों की जीवन पद्धतियाँ अलग–अलग प्रकार की थीं। किसान लोक–संस्कृति के अंग थे। यह संस्कृति मौखिक संस्कृति थी। इस संस्कृति की निरन्तरता पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलती रहती थी। संस्कृति में जब कोई नवीननीकरण आता था, तो इसे अपना लेती थी। जैसे अभिजन संस्कृति संस्कृत ग्रन्थों तथा कर्मकाण्ड पर आधारित थी और लोक– संस्कृति इससे बहुत कुछ ग्रहण कर लेती थी। इन दोनों संस्कृतियों में बराबर अन्तःक्रिया होती रहती थी। लेकिन आधुनिककरण के दौर में जब यह कृषकसामन्ती अर्थव्यवस्था, पूँजीवादी अर्थव्यवस्था में बदल गई, बाजारोन्मुख हो गई, तब इसमें भी आधुनिकीकरण का प्रवेश हो गया और इस तरह सामान्य परिवर्तन की प्रक्रिया को आधुनिकता ने एक नई तीव्रता प्रदान की। आधुनिकता ने परम्परागत समाज को एक नई भूमिका संरचना प्रदान की है। जैसे परम्परागत जाति व्यवस्था ने आज कई ऐसी बुद्धिसंगत व्यवस्थाएँ अपनाई हैं जो इसके लिए नई हैं। इसी कारण जाति व्यवस्था आधुनिकीकरण की प्रक्रियाओं के होते हुए भी, कानून के बन जाने पर भ, अपने अस्तित्व को बनाये हुए हैं और कोई भी आज विश्वासपूर्वक नहीं कह सकता कि भविष्य में यह समाप्त हो जायेगी।

मुख्य शब्द *: परम्परा, आधुनिकता, आधुनिकीकरण, सैद्धान्तिक, धर्म–निरपेक्ष।*

प्रस्तावना :

भारतीय समाज और उसकी सामाजिक संरचना अति प्राचीन काल की देन है। प्रायः इसका प्रारम्भ वैदिक काल से माना जाता है। आने वाले युगों में अनेक प्रकार के परिवर्तन और विकास हुए, जिनसे क्रमशः

गुजर कर भारतीय समाज आधुनिकता तक पहुँचा है। भारत में आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में परम्परा के तत्व भी बहुत बड़ी सीमा तक विद्यमान रहे हैं। समकालीन भारतीय समाज में अनेक धारणायें औं मूल्य' परम्पराओं के रूप में विद्यमान हैं, और दुनिया के अन्य विकासशील देशों की तरह भारत में भी आधुनिकता की धाराएँ उत्पन्न हुई हैं।

जून 1960 में बर्लिन में सांस्कृतिक स्वतंत्रता कांग्रेस के दसवें अधिवेशन में एशिया और अफ्रीका के नवीन राष्ट्रों में उत्पन्न परम्परा और आधुनिकता की समस्या पर विचार किया गया। इस अधिवेशन में अनेक प्रश्न उठाये गये, जिनमें आधुनिक प्रौद्योगिकी का जीवन और संस्कृति पर पड़ने वाले प्रभाव की विवेचना करने के साथ ही आधुनिकता और परम्परा के समन्वय की समस्या पर विचार–विमर्श हुआ। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, नवम्बर, 1961 में 'इंडिण्यन कमेटी फार कल्चरल फ्रीडम' के तत्त्वाधान में 'परम्परा एवं आधुनिकता' विषय पर गोष्ठी हुई। इस गोष्ठी में स्पष्ट किया गया कि परम्परा एवं आधुनिकता दोनों में ही मूल्यों एवं संस्थाओं की व्यवस्था का समावेश रहता है। परन्तु मूल्य और संस्थाएँ परम्परा एवं आधुनिकीकरण में अलग–अलग होती हैं। परम्परा और आधुनिकीकरण के क्षेत्र अलग–अलग अवश्य हैं, परन्तु कोई भी समाज न तो पूर्ण परम्परागत हो सकता है औश्र न ही पूर्णतया आधुनिक। परम्परा और आधुनिकता का भेद केवल सिद्धान्त और मॉडल के रूप में हैं, क्योंकि प्रत्येक समाज के अन्तर्गत आधुनिकता और परम्परा के तत्व मिले–जुले रूप में दिखाई देते हैं।

योगेन्द्र सिंह[2] ने बताया है कि परम्परा समाज की एक विरासत है, जो वास्तविक सामाजिक संगठन के सभी स्तरों में व्याप्त होती है। **मैक्किम मैरियट**[3] भी कहते हैं कि परम्परा सामाजिक स्थिति की एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से साँस्कृतिक विरासत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है।

परम्परा की व्याख्याएँ–

डी॰पी॰ मुखर्जी[4] परम्परा की व्याख्या करते हुए इस सामान्य धारणा को लेकर चलते हैं कि परम्परा एक सामाजिक व्यवहार है। यह व्यक्तियों के व्यवहार को मानक और मूल्य प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत धर्म–विधियाँ और प्रतीकात्मक व्यवहार सम्मिलित है। डी॰पी॰ मुखर्जी आधुनिकता को एक खोटी या अभिनयपूर्ण अवधारणा कहते हैं। उन्होंने परम्परा की व्याख्या आधुनिकता के सन्दर्भ में की है।

डी॰पी॰ मुखर्जी परम्परा के हिमायती रहे हैं, उन्हें भारतीय समाज में परम्परा और आधुनिकता दोनों में द्वन्द्व दिखाई देता है। भारतीय समाज में जा`भी परम्पराएँ हैं, वे सामाजिक तथा ऐतिहासिक प्रक्रियाओं का परिणाम हैं। भारत की बौद्धिक और कलात्मक उपलब्धियाँ किसी भी तरह से पश्चिम की तुलना में कमजोर नहीं हैं।

धीरेन्द्रनाथ मजूमदार[5] के अनुसार हमें अतीत (परम्पराओं) को वर्तामन के संदर्भ में यमझना चाहिए और वर्तमान को अतीत के संदर्भ में। कभी स्वर्ण युग नहीं था और न भविष्य में यह कभी होगा। जीवन तो समंजन की एक प्रक्रिया है और यह बराबर प्रकट या उघड़ती रहती है। वे लोग जो इस समंजन को नहीं पाते, समाज उन्हें फेंक देता है और जो नई व्यवस्था के साथ अपना जोड़ बैठा लेते हैं, वे आगे निकल जाते हैं।

मजूमदार परम्परा और आधुनिकता को जोड़ते हैं। परम्पराओं की समाज में वैधता है, लेकिन ये परम्पराएँ जड़ नहीं हैं इन्हें आधुनिकात के साथ समझौता करना पड़ता है तभी ये जीवित रह सकती हैं। मजूमदार ने

स्थापित किया कि किसी भी संस्कृति की ताकत उसकी परम्पराएँ होती हैं और परम्पराएँ इस अर्थ में ऐतिहासिक होती हैं।

वस्तुतः मजूमदार ने संस्कृति के ऐतिहासिक विकास की धारणा को सशक्त किया है, और रूचिकर बात यह है कि इस विकास को उन्होंन जमीन से जोड़ा है। साथ ही उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि हमारी संस्कृति के इतिहास में परम्पराएँ हमेशा आधुनिकता के साथ अनुकूलन करती आई हैं।

इरावती कर्वे[6] अपने अध्ययन में प्राच्य विद्या विधि को अपनाती हैं। वे पीछे मुड़कर वेदान्त, पुराण और महाकाव्यों को अपने प्रमाण जुटाने के लिए देखती हैं, और साथ ही साथ क्षेत्रीय तथ्य भी जुटाती हैं।

एम॰एन॰ श्रीनिवास[7] की परम्पराओं की व्याख्या जमीन से जुड़ी हुई अधिक हैं। उन्होंने अपनेक लेखन में गाँव, जाति और धर्म को अपनी अध्ययन सामग्री बनाया है। कनार्टक के रामपुरा गाँव का अध्ययन आज एक शास्त्रीय अध्ययन समझा जाता है। उनका दूसरा महत्वपूर्ण अध्ययन कुर्ग का है जिसका बहुत बड़ा सरोकार परम्पराओं से है। रामपुरा और कुर्ग के अध्ययन में श्रीनिवास पितृवंशीय परिवारों की परम्पराओं का विस्तृत उल्लेख करते हैं। परम्परा और धर्म विधियाँ किस भांति एक दूसरे से जुड़ी होती हैं, इसे कुर्ग के ओक्का में देखा जा सकता है। रामपुरा में भी इसी प्रकार ब्यौरा देते हैं। लगभग ई॰ 1956 के बाद श्रीनिवास[6] परिवार और धर्म से जुड़ी हुई परम्पराओं को जाति में देखते हैं। यहाँ वे परम्परा का उल्लेख आधुनिकता तथा पश्चिमीकरण के संदर्भ में करते हैं। 'कास्ट इन माडर्न इण्डिया एण्ड अदर एसेज' में वे परम्पराओं का उल्लेख केवल नाम के लिए करते थे, क्योंकि यहाँ उनकी समस्या परिश्चमीकरण और आधुनिकीकरण की व्याख्या करना होता है। अपनी इस पुस्तक में श्रीनिवास ने परम्पराओं के मूल को जाति व्याख्या में खोजा है।

जी॰एस॰ धुरिए[9] ने स्पष्ट रूप से कहीं भी भारतीय परम्पराओं को एक अध्ययन सामग्री के रूप में विश्लेषित नहीं किया है। उनकी कृतियों में आधुनिकीकरण और सामाजिक परिवर्तन को कोई भी विशेष स्थान नहीं है। धुरिए यथास्थिति बनाये रखने में पूरा विश्वास रखते हैं। धुरिए भारतीय समाज को परम्पराओं से भरा हुआ एक ऐसा केप्सयूल समझते हैं, जिसके माध्यम से समाज के सम्पूर्ण क्षेत्रों का विवेचन किया जा सकता है। धुरिए के लिए हिन्दू परम्पराएँ चाहें वे जातियों की, धर्म की, साधुओं की या जनजातियों की हों, सभी का मापदण्ड हिन्दू परम्पराएँ ही हैं। जिन समूहों में हिन्दू परम्परा का फीता सही नहीं बैठता, वे समूह हाशिये के समूह हैं अर्थात देश की मुख्यधारा से अलग–थलग हैं। शायद यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि धुरिए के लिए परम्परा एक प्रक्रिया न होकर स्वतः शोध–विधि है।

धुरिए ने परम्परा की व्याख्या आधुनिकता के संदर्भ में नहीं की है। वे हिन्दू सभ्यता का निर्माण करना चाहते थे। धुरिए का मानना है कि हिन्दू परम्पराएँ अपने में सशक्त हैं। धुरिए कहीं भी इन्हें आधुनिकता के साथ नहीं जोड़ते। वे अनिवार्य रूप से यह स्वीकार करते हैं कि भारतीय समाज की एकता उसकी परम्पराओं के कारण है तथा धर्म सम्पूर्ण देश को बाँधे रखता है।

सैद्धान्तिक रूप से **ए॰आर॰ देसाई**[10] ने परम्पराओं की व्याख्या प्राच्य विद्या या धार्मिक ग्रन्थों में नहीं खोजी। उन्होंने परम्पराओं को सामाजिक संस्थाओं, जैसे– गाँव और परिवार में खोजा है। उनके अनुसार परम्पराएँ वे हैं जिनका लोक–जीवन के साथ धर्म–निरपेक्ष सम्बन्ध है। गाँव की अपनी परम्पराएँ रही है। गाँव की एकता भी जो किसी भी भेद–भाव को नहीं करती, गाँव को यांत्रिक बना देती है। अतः देसाई ने स्पष्ट

किया है कि परम्पराएँ अपनी प्रकृति में साँस्कृतिक, आर्थिक और सामाजिक तत्त्वों से जुड़ी हैं। हर तरह से धर्म और धार्मिक ग्रन्थों से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है।

देसाई परम्पराओं को अनिवार्य रूप से धर्म–निरपेक्ष मानते हैं। इनकी प्रकृति उनके अनुसार आर्थिक है और इन्हें सामाजिक तथा ग्रामीण संस्थाओं में देखा जा सकता है। देसाई का यह भी मानना है कि जब हम परम्पराओं का उद्‌गम और उनकी प्रकृति, धर्म, धर्म–विधियों में देखते हैं तब स्पष्ट रूप से लगता है कि ये परम्पराएँ आम आदमी के शोषण के लिये हैं।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि एक परम्परा का तात्पर्य ऐसी आदतों, प्रथाओं, अभिवृत्तियों एवं जीवन–शैली से है, जो संस्थाओं के रूप में आबद्ध रहती हैं एवं संस्थाओं की स्थिरता और अस्तित्व के साथ ही सम्पूर्ण समाज से प्रतिबद्ध हो जाती हैं इसके साथ ही इसमें निरंतरता भी होती है और परिवर्तन के समय इसमें समायोजन सम्बनधी कठिनाईयाँ स्पष्ट होने लगती हैं। परम्परा से सम्बन्धित ये सभी विचार इस दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण हैं कि जब कभी भी परम्पराओं में परिवर्तन होने लगता है तो समाज का संस्थापक तथा संरचनात्मक स्वरूप नवीन मनोवृत्तियों और व्यवहारों के कारण परिवर्तित होने लगता है, तभी आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का स्परूप स्पष्ट होने लगता है।

आधुनिकता–

यूरोप में आधुनिकता का सूत्रपात नवजागरण से माना जाता है। भारत में आधुनिकता का आरम्भ अंग्रेजी उपनिवेश के साथ जोड़ा जाता है। यूरोप में आधुनिकता में विज्ञान और उद्योग को जोड़ा जाता है। यूरोप में आधुनिकता ने विज्ञान और उद्योग की प्रगति के साथ अपने कदम बढ़ाये। वहाँ सामन्तवाद ने पूँजीवाद को जन्म दिया। भारत में ऐसा नहीं हुआ। विज्ञान और पूँजीवाद की प्रगति भारत में बहुत देर से हुई। वास्तविकता यह है कि प्रत्येक देश अपनी सामाजिक और राजनीतिक दशाओं के अनुसार आधुनिकता को परिभाषित करता है। प्रत्येक स्थानिक समूह अपने–अपने संदर्भ या परिप्रेक्ष्य में आधुनिकता की व्याख्या करते हैं।

सन् 1968 में **गुन्नार मिर्डल**[11] की पुस्तक 'एशियन ड्रामा' के तीन खण्ड प्रकाशित हुए। इस प्रकाशन ने एशिया में आधुनिकता की चर्चा को एक नई हवा दी। मिर्डल के अनुसार एशिया के लगभग सभी देश राष्ट्र–निर्माण में आधुनिकता को अपना लक्ष्य समझते थे। इन देशों में प्रजातंत्र की स्थापना करना, उद्योग को बढ़ावा देना तथा पूंजीवादी पद्धति से विकास करना राष्ट्रीय नेताओं की नीति बन गये। **डेनियल लर्नर**[12] ने मध्य पूर्व एशिया के देशों, यथा–मिश्र, ईरान, जोर्डन, लेबनान, सीरिया तथा टर्की के आधुनिकता के लक्ष्यों को प्राप्त करने के अनुभवों को विश्लेषणात्मक रूप से रखा। इनका निष्कर्ष था कि जहाँ–जहाँ आधुनिकता पहुँची, वहाँ परम्पराएँ समाप्त हो गई या बहुत मकजोर हो गई। लर्नर ने आधुनिकता का अर्थ शहरीकरण, संचार व्यवसथा, उपभोग तथा संचार से उत्पन्न होने वाली कलात्मक वस्तुओं, जैसे कि– फिल्म, अखबार एवं शिक्षा आदि से लिया है। उनकी दृष्टि से ये सब कारक ही आधुनिकता के सूचकांक हैं।

आधुनिकता के ये सब लक्षण परस्पर विरोधी बयनों को रखते हैं अर्थात् यूरोप–अमेरिका में आधुनिकता की जो परिभाषा दी जाती है, वह कोई सर्वसम्मत परिभाषा नहीं है। लक्षणों का यह परस्पर विरोध में ही हो, ऐसा नहीं है। भारत में भी आधुनिकता की परिभाषा और इसके लक्षणों के विषय में बड़ा मतभेद है। एक ओर **डी॰पी॰ मुकर्जी**[13] यह कहते हैं कि आधुनिकता अपने अर्थ में एक फर्जी अवधारणा है। इसमें खोट के अतिरिक्त

और कुछ नहीं है। वहीं दूसरी ओर **एम॰एन॰ श्रीनिवास**[14] इस अवधारणा को विकास का एक सशक्त साधन मानते हैं और इससे आगे दिपांकर गुप्ता[15] आधुनिकता की सामान्य धारणा को भ्रमित धारणा कहते हैं। अर्थ हुआ कि आधुनिकीकरण की अवधारणा समाज सापेक्षिक है और इससे आगे एक ही समाज में इसे विभिन्न अर्थों में लिया जाता है। भारत के आदिवासियों के समाज के लिये आधुनिकता का मतलब संवैधानिक सुविधाओं और आरक्षण से है। राजनीतिज्ञों और अधिकारी तंत्र के लिये आधुनिकता शायद मध्यम और उच्च वर्ग की सुविणाएँ प्राप्त करने का अच्छा अवसर है। कुल मिलाकर भारत में आधुनिकता जाति, वर्ग और स्थानिक समूहों की सापेक्षिक है।

आधुनिकता के लक्षण–

आधुनिकता के कुछ लक्षण इस प्रकार है–

(i) वैश्वीकरण,

(ii) उच्च उपभोग

(iii) उचच वृद्धि दर,

(iv) प्रगति जनक,

(v) समग्रता,

(vi) नई जजमानी व्यवस्था,

(vii) मूल्यों का विकल्प,

(viii) सामाजिक आन्दोलन और आधुनिकता,

(ix) सामाजिक, आर्थिक और साँस्कृतिक रूपान्तरण,

(x) आधुनिकता के कानूनी पहल,

(xi) आधुनिकता : व्यवसाय और व्यवसायिकता,

(xii) विकास और पुनर्निमाण,

(xiii) कमजोर वर्गों की आधुनिकता।

परम्परा बनाम आधुनिकता–

योगेन्द्र सिंह[16] का कहना है कि यह आवश्यक नहीं है कि आधुनिकता अनिवार्य रूप से परम्परा को कमजोर ही करती है। यह भी देखा गया है कि कई बार आधुनिकता के हाथों परम्परा अधिक शक्तिशाली भी हो जाती है। परम्परा और आधुनिकता का केन्द्रीय आधार मूल्य है। इन मूल्यों के बल पर ही संरचनाएँ, यथा– जाति, परिवार, धर्म, शिक्षा आदि बनती हैं। इनकी प्रासंगिकता पर बड़ी लम्बी बहसें रही हैं। ये बहसें पिछले तीन दशकों में जोर इसलिए पकड़ गई कि इस अवधि में देश में विकास कार्यक्रम बड़ी ताकत से चले। इन वर्षें में कृषि उत्पादन बढ़ा, बड़े बाँध बने, कल–कारखाने आए और शहरीकरण हुआ। ये सब परिवर्तन विकास की छोटी–मोटी क्रांतियां थीं और इसी परम्परा के अस्तित्व और आधुनिकता के प्रभाव तथा इसकी व्यापकता को लेकर विवाद भी हुए।

परम्परा के समर्थकों का कहना है कि भारतीय समाज बुनियादी तौर पर एक देशी समाज है। इसकी एक बहुत पुरानी सभ्यता रही है। इस सभ्यता के जीवित रहने या इसकी निरन्तरता का कारण इसकी उदारता

बर्दाश्त करने की क्षमता और लचीलापन है। इसी कारण आधुनिकता इसे मान नहीं सकती। इसकी महान परम्परा, इसके शास्त्रीय ग्रन्थ और धर्म इस परम्परा को वैधता देते हैं तथा सबसे रूचिकर बात यह है कि यह परम्परा बराबर लघु परम्परा के सम्पर्क में है। महान परम्परा लघु परम्परा की ओर बढ़ती है तथा अपनी वैधता पाती है। दूसरी ओर लघु परम्परा जिसका स्थानीय समाज है, जमीन से जुड़े हुए लोग हैं, ऊपर की ओर पहुँचती हैं, ऐसी परम्परा आधुनिकता के हाथों कभी नहीं मर सकती।

निष्कर्ष :

अतः कहा जा सकता है कि आधुनिकता आज के समय में प्रभावशाली तो हैं, लेकिन फिर भी, भारीतय समाज का जो देशी आधार है उसे बदल नहीं पाई। आधुनिकता का पम्परा के साथ मुकाबला दो स्तरों पर है— महान परम्परा यानी अखिल भारतीय स्तर, और लघु परम्परा अर्थात् स्थानीय परम्परा। इन दोनों परम्पराओं पर आधुनिकता का प्रभाव पड़ता है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया भारत में एक प्रभावशाली प्रक्रिया है। वैश्वीकरण ने इस प्रक्रिया को और अधिक ताकतवर बना दिया है। ऐसी स्थिति में परम्पराओं के सामने केवल दो विकल्प हैं। एक विकल्प तो यह कि परम्परा कमजोर हो जाए, उसकी सांस फूल जाये और लम्बी अवधि में चलकर अपना दम तोड़ दे। दूसरा विकल्प यह है कि वह अपने आप को आधुनिकीकरण के मूल्यों में बाँध दे। परम्परा व आधुनिकीकरण के इन लेन—देन में संरचना के कई स्तरों पर संघर्ष भी आ जायेगा। कहीं परम्परा को आधुनिकता के साथ समझौता करना पड़ेगा और कहीं आधुनिकता को परम्परा के साथ। आर—पार की लड़ाई दोनों में नहीं हो सकती। अतः समझौता दोनों को करना पड़ेगा।

—: संदर्भ—सूची :—

1. गासीफील्ड, जे॰आर॰ :ट्रेडिशन एवं मार्डनिटि : मिसप्लेस्ड पोलेरिटीज इन द स्टडी ऑफ सोशल चेन्ज, इन पोलिटिकल डेवलपमेन्ट एण्ड सोशल चेन्ज, न्यायार्क, जान वाईली, 1966.
2. सिंह, योगेन्द्र : माडर्नाइजेशन ऑफ इण्डियन ट्रेडिशन, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 1994.
3. मैरियट, मैक्किम (सम्पा॰) : विपेज इण्डिया स्टडीज इन लिटिल कम्युनिटि, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, 1955.
4. मुकर्जी, डी॰पी॰ : दा सोर्स ऑफ इण्डियन ट्रेडिशन, एलाईड पब्लिकेशन, बम्बई, 1958.
5. मजूमदार, धीरेन्द्रनाथ : रेसेज एण्ड कल्चर्स ऑफ इण्डिया, एशिया पब्लिशिंग हाऊस, बम्बई, 1958.
6. कर्वे, इरावती : किनशिप आर्गेनाइजेशन इन इण्डिया, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1955.
7. श्रीनिवास, एम॰एन॰ : सोशल चेंज इन माडर्न इण्डिया, एलाईड पब्लिकेशन, बम्बई, 1966, पृष्ठ—66.
8. श्रीनिवास, एम॰एन॰ : कास्ट इन माडर्न इण्डिया एण्ड अदर एसेज, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1962.
9. धुरिए, जी॰एस॰ कास्ट एण्ड रेस इन इण्डिया, पापुलर प्रकाशन, बम्बई, 1932.
10. देसाई, ए॰आर॰ : रूरल सोशियोलाजी इन इण्डिया, वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई, 1959.
11. मिर्डल, गुन्नार : एशियन ड्रामा वोल्यूम—III, पगुइंन बुक्स, 1968.
12. लर्नर, डेनियल : दा पासिंग अवे ऑफ टेड्रिशनल माडर्नाईजिंग दा मिडिल ईस्ट, फ्रीप्रेस, 1958, 45—49.
13. मुकर्जी, डी॰पी॰ : ''पूर्वोक्त''

14. श्रीनिवास, एम॰एन॰ : ''पूर्वोक्त''

15. गुप्ता, दिपांकर : मिस्टेकन माडर्निटी, हारपर कालिन्स पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2000.

16. सिंह, योगेन्द्र : ''पूर्वोक्त''

SHIKSHA SAMVAD
An Online Quarterly Multi-Disciplinary
Peer-Reviewed or Refereed Research Journal
ISSN: 2584-0983 (Online) Impact-Factor, RPRI-3.87
Volume-01, Issue-03, March- 2024
www.shikshasamvad.com
Certificate Number-March-2024/23

Certificate Of Publication

This Certificate is proudly presented to

देवेन्द्र कुमार एवं डॉ0 पायल गोयल

For publication of research paper title

"भारतीय समाज में परम्परा एवं आधुनिकता: एक सैद्धान्तिक पक्ष"

Published in 'Shiksha Samvad' Peer-Reviewed and Refereed Research Journal and E-ISSN: 2584-0983(Online), Volume-01, Issue-03, Month March, Year- 2024, Impact-Factor, RPRI-3.87.

Dr. Neeraj Yadav
Editor-In-Chief

Dr. Lohans Kumar Kalyani
Executive-chief- Editor

Note: This E-Certificate is valid with published paper and the paper must be available online at www.shikshasamvad.com